Journal
Of the
Oriental Institute
M.S. University of Baroda

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

डॉ. नगेन्द्र की आलोचना में प्रगतिशील मूल्य

डॉ. सुशीला

सहायक आचार्या, हिन्दी विभाग, चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी (हरियाणा)

शोध–सारांश :–

डॉ. नगेन्द्र ने अंग्रेजी साहित्य के संस्कारों को आत्मसात् करके हिन्दी साहित्य में साहित्य का कार्य प्रारम्भ करके आलोचना के क्षेत्र में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया। इसलिए साहित्य के संबंध में डा. नगेन्द्र जिनकी मूल धारणाओं का मूल आधार अंग्रेजी साहित्य के कवियों और आलोचकों की मान्यताओं से प्रेरित है। उन्होंने उच्चत्तर हिंदी अध्ययन शोध कार्य एवं समीक्षा के क्षेत्र में अपनी अमिट छाप छोड़ी, विद्वता के प्रतिमान हैं। संस्कृत के आचार्यों में भट्टनायक और अभिनव गुप्त से हिंदी में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल से विशेष रुप से प्रभावित हुए। प्रायः सभी काव्य दृष्टियों के समन्वित प्रभाव के आधार पर विकसित और सुसस्कृत करते रहने के बावजूद डॉ. नगेन्द्र रस सिद्वांत के प्रति अपनी आस्था था में अपराजेय रहे हैं। डॉ. नगेन्द्र पश्चिमी अवधारणाओं से अधिक प्रभावित रहे परन्तु भारतीय जीवन मूल्यों के अनुरुप ही ढलकर आत्मसात् किया।

बीज शब्द :–

प्रगतिशील, मूल्य, आलोचना युगानुकूल, परिमार्जन प्रस्तुतीकरण, मानवीय जागरुकता, संवेदनशीलता, सौंदर्य आनन्द, व्याप्ति।

डॉ. नगेन्द्र की आलोचना पद्वति को आचार्य शुक्ल की पद्वति का विकसित रुप कहा जा सकता है। वे रस सिद्वांत को युगानुकूल व्याप्ति देना चाहते हैं तथा विकसित जीवन मूल्यों के साथ शास्त्रीय सीमाओं को भी विकसित देखना चाहते थे। डॉ. निर्मला जैन के शब्दों में – स्वभाव से डॉ. नगेन्द्र विरोध सहने के आदी नहीं थे। वे अपने विरोधियों से डटकर लोहा लेते हैं पर विरोध की संभावना और उपस्थिति को कभी नकारा नहीं। वे आंतरिक रुप से अत्यंत मानवीय कोमल स्वभाव के थे। ''चिरकाल से उपेक्षित कवि व्यक्तित्व की ओर डॉ. नगेन्द्र ही पहले–पहल आकृष्ट हुए और इसी आधार पर उन्होंने कवि की अनुभूति के साधारणीकरण को महत्त्व प्रदान किया तथा साथ ही कवि

तथा सह्रय दोनों में ही रस की स्थिति मानी। रस शब्द का अर्थ विकास .कामसूत्र से लेकर आनन्द के रुप में किया।''[1]। ''वे शास्त्रीय इन अर्थों में थे कि प्राचीन संस्कृत काव्यशास्त्र का परिमार्जन एवं प्रस्तुतीकरण उन्होंने अधिक किया, आधुनिक इन अर्थों में कि उन्होंने नवीन प्रश्नों और नवीन उपलब्धियों के प्रति अधिक जागरुकता दिखाई''।[2] ''इन्होंने शास्त्रीय विषयों को ऐसी स्वच्छ शैली के साथ हाथ लगाया कि उनके विरोधी समीक्षक भी उनके सिद्वांतों की तरफ आकृष्ट हुए बिना न रह सके तथा उनकी भूरी–भूरी प्रशंसा की। उनकी समीक्षा में न्यूनाधिक मात्रा में तीन तत्त्वों ने योग दिया– संस्कृत काव्यशास्त्र, पाश्चात्य काव्यशास्त्र और युग सचेष्ट अन्तर्दृष्टि। भारतीय काव्यशास्त्र में साधारणीकरण के सिद्वांत को वे मानव मूल्यों की स्वीकृति का सिद्वांत ही मानते हैं।[3] ''डॉ. नगेन्द्र ने शास्त्रों के अध्ययन में जड़ ज्ञान की प्राप्ति का साधन न बनाकर उसे काव्य भाव के भीतर निहित अनुभूतिमूलक एकता की खोज का साधन बनाया, किन्तु लेखक की ओर से अपनी बात शास्त्र के भीतर से खींची गई है''।[4] ''जहॉ इनकी शास्त्र चर्चा में शास्त्रीय दृष्टि पारिभाषिकता प्राप्त होती है, वहीं एक सौंदर्य खोजी दृष्टि का लालित्य और अपनापन भी दिखाई पड़ता है। सौंदर्य को मूल्य मानते हुए क्या महत्त्व देते हुए पंत के भाव जगत की निर्माण शक्तियों पर विचार करते समय वे पंत काव्य में ऐन्द्रियता को सौंदर्य उपासना का एक गुण मानते हैं। वे जीवनप्रद सौंदर्य को ही सौंदर्य की कोटि में स्थान देते हैं, जो वासना रहित है। भारतीय सौंदर्य शास्त्र की भूमिका में उन्होंने सौंदर्य को निरपेक्ष स्वतंत्र मूल्य मानने से इंकार किया है और कहा है– स्वतंत्र मूल्य होने पर भी सौंदर्य की सत्ता निरपेक्ष नहीं है, वह जीवन के अन्य बृहत्तर मूल्यों के साथ नैतिक मूल्यों, सामाजिक मूल्यों के साथ पुरुषार्थ का आध्यात्मिक तथा अनिवार्य रुप से संबंध है''।[5] ''वास्तव में सौंदर्य काव्य –कला का काव्य आन्तिरिक मूल्य है, परन्तु जीवन के व्यापक परिवेश के साथ संबंध होने के लिए उसे अन्य बृहत्तर मूल्यों के साथ जुड़ना ही पड़ता है।

सौंदर्य कला का पर्याय है, जिसमें कल्याण की शक्ति होती है। नयी समीक्षा नये संदर्भ में डॉ. नगेन्द्र लिखते हैं''– ''छायावादी कवि नारी के अंगों की मांसलता के प्रति आकृष्ट न होकर उसके मन और आत्मा के सौंदर्य पर मुग्ध होता है, वह रुप के माध्यम से अभिव्यक्त उसके ह्रदय के माधुर्य को अनावृत्त करता है''।[6]'' सौंदर्यानुभूति व्यक्ति को गतिशील, क्रियाशील, चिन्तनशील, संवेदनशील तथा मननशील एवं कल्पनाशील बनाती है। डॉ. नगेन्द्र सांमजस्य के स्वामी हैं। विघटन के दुश्मन हैं,

Journal
Of the
Oriental Institute
M.S. University of Baroda

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

लगाव का सहयोगी और अलगाव का विरोधी हैं।''[7] ''छायावाद के प्रति डॉ. नगेन्द्र की दृष्टि उन्हें प्रगतिशील मूल्यों के प्रति जागरुक सिद्व करती है। साकेत एक अध्ययन उर्मिला का विरह सूर की गोपियों के विरह से भिन्न है। उर्मिला द्वारा दूसरों के दुःखो का भी ध्यान रखना गॉधीवादी विचारों का प्रभाव है। इसी प्रकार कैकेयी के चरित्र का जो उज्जवलीकरण किया गया है, उस पर गाँधी जी का विचार पाप से घृणा करो किन्तु पापी से प्रेम। सिद्वांत का प्रभाव दिखाई पड़ता है''[8] ''डॉ. नगेन्द्र इस स्थिति पर क्षोभ व्यक्त करते हैं कि भारतीय साहित्य में रीतिकाल की भाँति हिंदी साहित्य के इतिहास में रीतिकाल भी अत्यंत अभिशप्त काल माना गया है। रीतिकाल की भूमिका, देव और उनकी कविता रीतिकाव्य को प्रतिष्ठित करने के लिए ही लिखी गयी। वे मानते हैं कि रीतिकाव्य सामाजिक चेतना की दृष्टि से कमजोर है, उसकी काव्य वस्तु भी एक सीमित क्षेत्र से बाहर व्यापक संसार में किसी रुचि का प्रमाण नहीं देता, लेकिन कवियों को निश्छल आत्माभिव्यक्ति द्वारा जिस परिष्कृत आनंद की सृष्टि यह काव्य करता है, उसकी उपेक्षा करना गलत है। नैतिक और सामाजिक मूल्यों से अलग इस आनन्द और सौंदर्य की जो सृष्टि करता है, उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। इन कवियों का शास्त्र ज्ञान और लोकानुभव दोनों खूब समृद्व हैं।''[9]

''डॉ. नगेन्द्र का मानना ह कि जीवन के उदात्त आदर्शों के प्रति अपेक्षा का दृष्टिकोण अपनाने के कारण प्रगतिवाद उतना अधिक सफल नहीं हो सका, जितनी की आशा थी। प्रगति का साधारण अर्थ आगे बढना, जो साहित्य जीवन को आगे बढाने में सहायक हो वही प्रगतिशील साहित्य है, इस दृष्टि से तुलसीदास सबसे बड़े प्रगतिशील साहित्यकार हैं। भारतेन्दु बाबू मैथिलीशरण गुप्त भी इस अर्थ में प्रगतिशील साहित्यकार हैं। परन्तु आज का प्रगतिवादी इनमें से किसी को भी प्रगतिशील नहीं मानेगा। ये सभी तो उसके मतानुसार प्रतिक्रियावादी लेखक हैं।''[10] प्रगतिवादी का वर्ण्य विषय, जीवन कैसा है, तक ही रहा, जीवन कैसा होना चाहिए, तक उसकी दृष्टि नहीं गई। डाॅ. नगेन्द्र को प्रगति पसंद है, पर वह जो वर्ग चेतना से ऊपर होती है, जो राजनीतिक पार्टी की विचारधारा के सीमित दायरे से ऊपर होती है। दूसरी तरफ वे इस मूल्य को भी अस्वीकार नहीं करते कि प्रगतिवादी काव्यधारा सर्वत्र दलित वर्ग की सहानुभूति के प्रवाह में विचरित होती रही, यथार्थ उसकी श्वास रही। आनंद की नई व्याख्या पाते हुए हम डॉ. नगेन्द्र में प्रगतिशील मूल्यों को पुष्ट होते हुए देखते हैं। आनंद को वे काव्य के प्रयोजन के रुप में स्वीकार करते हैं, निष्प्रयोजन कम तो नहीं होगा, जो

ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

निरर्थक होगा।[10] ''धन, यश और प्रचार ये सब स्थूल प्रयोजन हैं। आनंद के समान्तर वे लोक कल्याण और चेतना प्रयोजन को भी विचारणीय मानते हैं। लोक हित को प्रयोजन मानकर चलने वाला साहित्यकार लोक में अपने स्व का विस्तार करके आनंद लाभ ही प्राप्त करता है।''[11] ''वह आत्मनः कामायः लोक कल्याण से ही अनुरक्त होता है। इसी प्रकार चेतना के परिष्कार की परिणति भी आनंद की अनुभूति में ही होती है। काव्य के आस्वाद का आनंद रसानुभूति का ही आनंद है। काव्य मूल्यों के सम्बंध में डॉ. नगेन्द्र का मानना है कि काव्य मूल्य का अर्थ है : वह गुण या दोष, समुदाय जिसके द्वारा काव्य की सिद्वि का निर्धारण किया जाता है, वह गुण इस दृष्टि से मूल्य का आधार है। अतः प्रयोजन ही सिद्व होता है। जिस काव्य में रागात्मकता आस्वाद प्रदान करने की क्षमता, जितनी अधिक होगी उतना ही उसका मूल्य होगा।''[11] उन्होंने आनंद ओर कल्याण को अभिन्न दिखलाने की चेष्टा की है। उनके अनुसार आनंद कोई सार्वजनिक वस्तु नहीं है।[12] ''लेखक की आत्माभिव्यक्ति के द्वारा जो परिष्कृत आनंद प्राप्त होता है, उसका नैतिक एवं सामाजिक मूल्य से स्वतंत्र भी एक महत्त्व है। सामाजिक दायित्व के निर्वाह में यदि लेखक त्रुटि करता है तो वह नैतिक रुप से अपराधी है। डॉ. नगेन्द्र ने साहित्य में मूल्यों की बहुत चिंता नहीं की है, उनके मत से काव्यानंद में ही मूल्य पर्यवसित हो जाते हैं'' डॉ. नगेन्द्र आनंद को सभी रसों से अनिवार्य मानते हैं। ''परिष्कृत आनंद जीवन में रस उत्पन्न करता है। इस प्रकार की निश्छल आत्माभिव्यक्तियों ने सामाजिक चेतना का कितना संस्कार किया है, इसका अनुमान लगाना आज कठिन है।''[13]

''मानवता की प्रेरणा से ही इच्छा ज्ञान क्रिया अथवा संस्कृति विज्ञान और राजनीति में सामंजस्य स्थापित हो सकता है। रस सिद्वांत में हो सकता है। रस सिद्वांत में डॉ. नगेन्द्र ने लिया है जीवन की निरन्तर विकासशील धारणाओं और आवश्यकताओं का आंकलन मानवतावाद में ही हो सकता है। जीवन की भूमिका में जब तक मानवता से महत्तर सत्य का आविर्भाव नहीं होता और साहित्य की भूमिका में जब तक मानव संवेदना से अधिक प्रभावित सिद्वांत की प्रकल्पना भी नहीं हो सकती।''[14] उन्होंने लोकमंगल और लोकहित को भी मानवतावाद के साथ संबंध किया है।[15] ''नगेन्द्र की दृष्टि मानवतावादी है, इस बात से भी पता चलता है कि प्रेमचंद जीवन का मूल्य तत्त्व थे। मानवतावाद मानते हैं और उसकी व्यापक सहानुभूति की प्रशंसा करते हैं। प्रेमचंद पराधीन भारत के पूरे शोषण चक्र का चित्रण करते हैं। जिसमें उनके व्यक्तित्त्व का मानव पक्ष अत्यंत विकसित जनता,

Journal
Of the
Oriental Institute
M.S. University of Baroda
ISSN: 0030-5324
UGC CARE Group 1

गाँव के अनपढ़ और भोले–किसान और शहर के शोषित मजदूर निम्न वर्ग व्यवस्था के शिकार नर–नारी तो उनके विशेष स्नेह भाजन थे ही परन्तु उनके अतिरिक्त अन्य वर्गों के प्राणी भी उच्च वर्ग के राजा उद्योगपति, जमीदार और मध्यवर्ग के व्यवसायी, नौकरी, पेशा, लोग समाज के पुराणपंथी, पंडित, पुरोहित भी उनकी सहानुभूति से वंचित नहीं थे।''[16] प्रेमचंद की दृष्टि मानव के सभी भेदों से मुक्त भी कहकर नगेंद्र ने अपनी मानवतावादी दृष्टि अध्कि परिचय दिया है। जिसमें शोषित वर्ग संगठित होकर शोषक वर्ग को सत्ता से उखाड़ फैंकता है। इसे उन्होंने मानव के प्रति मानव का घृणित संघर्ष कहा है। डॉ. नगेन्द्र का योगदान मुख्यतः नई बातें उद्घाटित करने में उतना नहीं है, जितना उद्घाटित बातों को ही अधिक संघनता और संगति से विश्लेषित करने में तथा नई समझदारी से कृतियों का विवेचन करने में है।

इनके अनुसार रस आज के साहित्य के मूल्यांकन के लिए पर्याप्त और समर्थ है किन्तु रस को रुढ़ रुप में न लेकर विकासमान रुप में लेने की आवश्यकता है। मूल्यों को वे देश कालबद्व और परिवर्तनशील मानते हैं। उनका विश्वास है कि मानवता मानव कल्याण, मानव मूल्यों आदि शब्दों के निरन्तर और सर्वव्यापी प्रयोग से यह सिद्व हो जाता है कि मानव प्रकृति में कुछ तत्त्व ऐसे होते हैं,ज ो सार्वभौमिक तथा सार्वकालिक हैं तथा विभिन्न देशकाल के मानव प्राणियों में मूलतः समान हैं।''[16] इन्हीं तत्त्वों की अभिव्यक्ति जीवन के नाना रुपों में होती है। काव्य भी उनमें से एक है और अपनी परिष्कृति तथा प्रभाव के कारण विशिष्ट गौरव है। उन्होंने काव्यशास्त्र जैसे शुडष्क, नीरस विषय को जिस रचनात्मक, कल्पनात्मक शक्ति द्वारा रोचक और आकर्षक बनाया, उससे उनके शास्त्रीय अनुसंधानों के मानवीय और साहित्यिक मूल्यों में बहुत अधिक मात्रा में परिवृद्वि हो गई। सिद्वांत वर्तमान की समस्याओं को अपने विवेचन में गौण स्थान दिया। यही उनकी सीमा मानी जा सकती है पर इससे यह भी सिद्व है कि हिपोक्रेट नहीं थे।

निष्कर्ष :–

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम अन्त में हम यह कह सकते हैं कि डॉ. नगेन्द्र जी ने नवीन यात्राओं की पहचान का प्रयत्न उनके शास्त्रीय आधार को नूतन रुप देता चला है और शास्त्रीय आधार नवीन यात्राओं के स्वरुप को मूर्त्त रुप में देखने की दृष्टि है। डॉ. नगेन्द्र जी अपनी

मान्यताओं के प्रति उनमें अटूट निष्ठा है। यथा संभव डॉ. नगेन्द्र की आलोचनात्मक दष्टि में प्रगतिशील मूल्यों को निर्धारित करने का रहा। डॉ. नगेन्द्र ने अपनी आलोचना पद्वति में नये–नये आलोचना के तत्त्वों को स्थान देकर आलोचना के क्षेत्र में नये–नये प्रतिमान स्थापित नहीं करे अपितु आलोचना के क्षेत्र में अपना विशेष स्थान बनाया।

संदर्भ सूची :–

1. व्यास गोपाल प्रसाद, हिन्दी की आस्थावान पीढी, नेशनल पब्लिसिंग हाऊस नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2004, पृष्ठ संख्या 19
2. लक्ष्मी एस. डॉ. नगेन्द्र : विश्लेषण और मूल्यांकन, रंजन प्रकाशन, आगरा, प्रथम संस्करण 1971, पृष्ठ संख्या 246
3. मिश्र रामदरश, हिन्दी आलोचना की प्रवृत्तियॉ और आधार भूमि नार्थ इंडिया पब्लिसिंग नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2002, पृष्ठ संख्या 206
4. डॉ. नगेन्द्र, भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, ओरिएंटल बुक डिपो, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1955, पृष्ठ संख्या 211
5. डॉ. नगेन्द्र, नयी समीक्षा नए संदर्भ नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, संस्करण 1974, पृष्ठ संख्या 94
6. उपाध्याय पशुपतिनाथ, आलोचक डॉ. नगेन्द्र कृतित्त्व के विविध आयाम ग्रन्थायन प्रकाशन अलीगढ, प्रथम संस्करण 1985, पृष्ठ संख्या 95
7. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी आलोचना, राजकमल कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1970, पृष्ठ संख्या 187
8. मधुरेश, हिंदी आलोचना का विकास, सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2004 पृष्ठ संख्या 126
9. डॉ. नगेन्द्र आधुनिक कविता की मुख्य प्रवृत्तियॉ, नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1951, पृष्ठ संख्या 99
10. रामचन्द्र तिवारी, आलोचक का दायित्व, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण 2005,

पृष्ठ संख्या 158
11. डॉ. नगेन्द्र, आलोचक की आस्था, नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, संस्करण 1966, पृष्ठ संख्या 5
12. बच्चन सिंहं, आलोचक और आलोचना, नेशनल पब्लिसिंग, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1984,
पृष्ठ संख्या 200
13. डॉ. नगेन्द्र विचार और विवेचन, नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1949,
पृष्ठ संख्या 56
14. सुमित्रा नंदन पंत, डॉ. नगेन्द्र : अभिनंदन ग्रंथ, आर्य बुक डिपो, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1975,
पृष्ठ संख्या 712
15. डॉ. नगेन्द्र, आस्था के चरण, साहित्य रत्न भंडार, आगरा, प्रथम संस्करण 1942, पृष्ठ संख्या 45
16. माक्खनलाल आधुनिक हिंदी आलोचना एक अध्ययन, साहित्य प्रकाशन, दिल्ली अप्रकाशित,
पृष्ठ संख्या 249